सिमरन

भाग - १६

जब लड़की की सगाई हो जाती है तो उसका ध्यान, सुरति धीरे-धीरे 'मायके' से घटती जाती है और **'ससुराल'** की ओर खिंचती जाती है। वह अपने **'प्रीतम' की 'खबरें'** सुनने का प्रयास करती है तथा 'ससुराल' की बातों में उसकी रुचि बढ़ती जाती है। इस प्रकार अनजाने ही उसकी 'प्रीत डोरी' अपने 'प्रीतम' से पक्की बंधती जाती है। उसका मन, सुरति **'आपा'** (self) अपने प्रीतम की 'याद' अथवा 'सिमरन' में सहज-स्वभाविक ही लगा रहता है।

यह **सिमरन-जीवन** की, ध्यान अवस्था है। इस अवस्था में सहज स्वाभाविक अनजाने ही उसके 'हथ कार वल ते चित्त यार वल' (अर्थात काम काज करते हुए ध्यान प्रीतम की ओर) लगा रहता है। लड़की अपनी **मां के घर** पहले की भांति ही घर के सभी काम-काज किसी **'वैराग्य'** में निभाती है।

कई लोग शंका करते हैं कि यदि **'सिमरन'** करने लगे तो संसारिक काम कौन करेगा ?

सगाई के बाद **मायके** में रहती हुई लड़की का जीवन इन शंका-वादियों के लिए एक **उचित व्यवहारिक** उदाहरण (practical example) है।

जिज्ञासु जब पाँच प्यारों से **'खंडे बाटे का अमृत'** पान कर लेता

है तो वह **'गुरू वाला'** बन जाता है । उसका **'प्यार'** तथा **'झूकाव'** गुरु घर की तरफ बढ़ता जाता है ।

ज्यों-ज्यों गुरसिख 'साध-संगत' में विचरण करता है तथा **'सिमरण'** के द्वारा **'शब्द'** का अभ्यास करता है त्यों-त्यों उसकी 'सुरति' प्रीत, प्यार अथवा **'प्रेम स्वैपना'** का रस पीती हुई **इलाही 'प्रीत-डोरी' द्वारा खिंचती जाती है ।** यह प्रीत डोरी न टूटती है न ढीली पड़ती है –

मू लालन सिउ प्रीति बनी ।। रहाउ ।।
तोरी न तूटै छोरी न छूटै ऐसी माधो खिंच तनी ।। (पृ८२७)

विसरत नाहि मन ते हरी ।।
अब इह प्रीति महा प्रबल भई आन बिखै जरी ।। (पृ ११२०)

इस प्रकार गुरसिख की **'सुरति'** इलाही **'प्रीत-डोरी'** के **खिंचाव द्वारा** आत्म-मंडल के प्रेम-स्वैपना के आकाश में **उड़ान भरती हुई** आत्म-रंग-रस में **अलमस्त मतवारी** हो जाती है । उसे मायिकी मंडल की **'पकड़' या 'मोह'** नहीं रहता तथा वह **सहज ही 'माया' में उदासीन** हो कर विचरण करता है ।

गुरसिख जोगी जागदे माइआ अंदरि करनि उदासी ।
(वा.भा.गु. २९/१५)

गोबिंद प्रीति लगी अति मीठी
अवर विसरि सभ जाइ ।। (पृ. ११९९)

गुरमुखि होइ सु अलिपतो वरतै
ओस दा पासु छडि गुर पासि बहि जाइआ ।। (पृ ३०३-४)

माइआ मोहि नटि बाजी पाई ।।
मनमुख अंध रहे लपटाई ।।
गुरमुखि अलिपत रहे लिव लाई ।। (पृ. २३०)

वास्तव में गुरमुख के मायिकी तथा आत्मिक जीवन में उसकी सुरति की डोरी को सतगुरू अपने हाथ **में पकड़े** रखता है तथा अपनी **'कृपा दृष्टि'** द्वारा उसके –

अंग संग रहता है
रखेल खिलाता है
लाड लडाता है
पालन पोषण करता है
सेवा सम्भाल करता है
कलह-कलेष से बचाता है
श्रद्धा भावना पैदा करता है
प्रेम की बख्शिश करता है
सत्संग की बख्शिश करता है
रक्षा करता है
नाम जपाता है
सिमरन जीवन की बख्शिश करता है
सेवा में लगाता है ।

गुरबाणी में इस अनोखी निराली आत्मिक **'सिमरन जीवन'** की खेल को यूं स्पष्ट किया गया है –

साचि नामि मेरा मनु लगा ।।
लोगन सिउ मेरा ठाठा बागा ।।१।।
बाहरि सूतु सगल सिउ मउला ।।
अलिपतु रहउ जैसे जल महि कउला ।।१।। रहाउ ।।
मुख की बात सगल सिउ करता ।।
जीअ संगि प्रभु अपुना धरता ।।२।।

दीसि आवत है बहुतु भीहाला ।।
सगल चरन की इहु मनु राला ।।
नानक जनि गुरु पूरा पाइआ ।।
अन्तरि बाहरि एकु दिखाइआ ।। (पृ ३८४-८५)

इस प्रकार जब जिज्ञासु की सुरति **'हरि-नाम' में लीन रहे** तो वह संसार में **'अतिथि' की भान्ति 'त्यागी'** जीवन व्यतीत करता है –

गुरसिख मनहु न विसरै
चलणु जाणि जुगति मिहमाणा ।। (वा. भा. गु. ३२/१)

दुनीआ विचि पराहुणा दावा छडि रहै ला दावै ।
(वा. भा. गु. २९/१३)

अफीमची के मन-चित्त में सहज ही **'अफीम** का **'सिमरन' होता** रहता है। उसके चेहरे, आँखों, रहन-सहन, क्रिया-कलाप सब में अफीम की **झलक** दिखती है तथा वह **'अफीम' का ही साक्षात स्वरूप बन जाता है ।**

इसी प्रकार बख्शे हुए गुरमुख जन केवल रसना द्वारा ही सिमरन नहीं करते **अपितु उन का तन, मन, चित, अंतःकरण यहां तक की 'संपूर्ण अस्तित्व' अटूट सिमरन करता हुआ शब्द सुरति में 'लीन' हो जाता है ।**

गुरमुखि रोमि रोमि हरि धिआवै ।। (पृ. ९४१)

दमि दमि सदा सम्हालदा दंमु न बिरथा जाइ ।।
जनम मरन का भउ गइआ जीवन पदवी पाइ ।। (पृ. ५५६)

उन के जीवन के हर पक्ष, जैसे के –

कथन

क्रिया

रहन-सहन

उठने-बैठने

सोच-विचार

चिन्तन

कर्म-धर्म

व्यापार

पाठ-पूजा

परमार्थ

सेवा

उपकार

प्यार

आदि पर **नाम की रंगत चढ़ी होती है ।**

उसके देखने का ढंग, हरकत तथा वाणी में **'प्रिम-प्याले'** के **'नशे की झलक'** दिखती है तथा उसका जीवन **'सिमरन' का रूप ही बन जाता है** –

जीवन रुप सिमरणु प्रभ तेरा ।। (पृ. ७४३)

जीवना सफल जीवन सुनि हरि जपि जपि सद जीवना ।।
(पृ. १०१९)

गुण गावा नित नित सद हरि के
मनु जीवै नामु सुणि तेरा ।। (पृ. ५६२)

नामु न बिसरै तब जीवनु पाइऐ
बिनती नानक इह सारै ।। (पृ. १२१४)

इस प्रकार गुरमुख जन **गृहस्थ में 'उदासीन' रहते हुए** अपने प्रीतम

के **प्रीत – प्रेम-प्यार के 'चलूले'(गदगद) रंग-रस में अलमस्त-मतवारे** हुए **रहते हैं ।**

'शब्द सुरति' की **'प्रेम स्वैपना'** का आनन्द लेते हुए –

प्रीत डोरी से बंधना

प्रीत डोरी का खिंचाव महसूस करना

प्रेम वियोग में तड़पना

हरि कीर्तन में बाणी के तीर सहने

प्रीतम के संदेश सुनने

प्रीतम के गुण गाना

नाम का रंग रस पान करना

प्रेम तरंगों के झटके सहना

अनहद धुन में मोहित होना

बैरवरीद गुलाम बनना

सेवा में खो जाना

यह सब इलाही मंडल की ही –

तरंगें हैं

प्रेम हिंडोले हैं

रून झुन है

अनहद धुन है

"सति सुहाण सदा मनि चाउ" है

खेल निराली है ।

शब्द सुरति की **संपूर्ण अन्तरमुखी "प्रिम खेल"** का अनुभव द्वारा **आनंद उठाना तथा विस्मादित होना**

'सिमरन'

का ही परिणाम, प्रकटाव तथा प्रतीक है ।

यह उच्च, पवित्र, पावन, आत्मिक -खेल निराली, निर्मल तथा कठिन है परन्तु **'गुरु की कृपा' से तथा 'साध -संगत' की सहायता से यह अति कठिन खेल भी सरल हो जाती है** –

साधसंगति अरु गुर की क्रिपा ते पकरिओ गढ़ को राजा ।।
(पृ ११६१ -६२)

मन करहला मेरे पिआरिआ सतसंगति सतिगुरु भालि ।।
सतसंगति लगि हरि धिआइऐ हरि हरि चलै तेरै नालि ।।
(पृ. २३४)

यह 'आत्मिक' **'अनुभवी -अवस्था'** अथवा **'प्रेम -पदार्थ'** केवल पूरे सतिगुरु की कृपा -दृष्टि द्वारा ही प्राप्त हो सकता है । इस **'इलाही -दात'** को **जीव के हठ या जोर से नहीं प्राप्त किया जा सकता** –

जोरु न सुरती **गिआनि वीचारि** ।। (पृ. ७)

दातै दाति रखी हथि अपणै
जिसु भावै तिसु देई ।। (पृ. ६०४)

आपणा लाइआ पिरमु न लगई जे लोचै सभु कोइ ।।
एहु पिरमु पिआला खसम का जै भावै तै देइ ।। (पृ. १३७८)

जिन कउ प्रेम पिआरु **तउ आपे लाइआ करमु करि** ।।
(पृ १४२२)

इस **'इलाही दात'** को प्राप्त करने के लिए गुरबाणी में निम्न -लिखित साधना बताई गई है –

तनु मनु धनु सभु सउपि गुर कउ **हुकमि मंनिऐ पाईऐ** ।।
(पृ. ९१८)

सुनि सरवीए प्रभु मिलण नीसानी ।।
मनु तनु अरपि तजि लाज लोकानी ।। (पृ. ७३७)

गुरु सालाही आपणा निवि निवि लागा पाइ ।।
तनु मनु सउपी आगै धरी **विचहु आपु गवाइ ।।** (पृ. ७५६)

मनु तनु सउपे कंत कउ सबदे धरे पिआरु ।। (पृ. ८९)

'सिमरन' की अन्तरमुखी अनुभवी 'प्रिम-खेल' को हमारी सीमित बुद्धि नहीं पकड़ सकती –

जन नानक इहु खेलु कठनु है किनहुं गुरमुखि जाना ।।
(पृ. २१९)

फिर भी इस अनोखी आत्मिक **'प्रिम-खेल'** को इशारे-मात्र या 'टोह-मात्र' हमारी अल्प बुद्धि को समझाने हेतु गुरबाणी यूं ब्यान करती है –

तह अनद बिनोद सदा अनहद झुणकारे राम ।।
मिलि गावहि संत जना प्रभ का जैकारो राम ।। (पृ. ५४५)

अनहदो अनहदु वाजै रुण झुणकारे राम ।।
मेरा मनो मेरा मनु राता लाल पिआरे राम ।। (पृ. ४३६)

मै मनि तनि प्रेम पिरंम का अठे पहर लगंनि ।।
जन नानक किरपा धारि प्रभ सतिगुर सुखि वसंनि ।। (पृ. ३०१)

गोबिन्द प्रीति लगी अति पिआरी ।।
जब सतसंग भए साधू जन हिरदै मिलिआ सांति मुरारी ।।
(पृ. ६०७)

सबद सुरति लिव लीण होइ अकथ कथा गुर सबदु सुणंदे ।।
(वा. भा. गु. ६/१४)

साची प्रीत हम तुम सिउ जोरी ।।
तुम सिउ जोरि अवर संगि तोरी ।। (पृ. ६५९)

नामे प्रीति नाराइण लागी ।।
सहज सुभाइ भइओ बैरागी ।। (पृ. ११६४)

साचि नामि मेरा मनु लागा ।।
लोगन सिउ मेरा ठाठा बागा ।। (पृ. ३८४)

ज्यों ज्यों जिज्ञासु का इलाही प्रेम **तीव्र तथा तीक्ष्ण होता जाता है, उसकी बिरह की तड़प भी बढ़ती जाती है** तथा वह प्रीतम के दर्शनों के लिए **विह्वल हो कर** अरदास तथा विनती करता है –

कोई आणि मिलावै मेरा प्रीतमु पिआरा
हउ तिसु पहि आपु वेचाई ।।
दरसन हरि देखण कै ताई ।।
क्रिपा करहि ता सतिगुरु मेलहि हरि हरि नामु धिआई ।।
(पृ. ७५७)

आस पिआसी मै फिरउ कब पेखउ गोपाल ।।
है कोई साजनु संत जनु नानक प्रभ मेलणहार ।। (पृ. ९२८)

हरि पेखन कउ सिमरत मनु मेरा ।।
आस पिआसी चितवउ दिनु रैनी है कोई संतु मिलावै मेरा ।।
(पृ. २०४)

मनु लोचै हरि मिलण कउ किउ दरसनु पाईआ ।।
मै लरव विड़ते साहिबा जे बिन्द बोलाईआ ।। (पृ. १०९८)

माई मोरो प्रीतमु रामु बतावहु री माई ।।
हउ हरि बिनु खिनु पलु रहि न सकउ जैसे करहलु बेलि रीझाई ।।
(पृ. ३६९)

हरि बिनु रहि न सकै मनु मेरा ।।
मेरे प्रीतम प्रान हरि प्रभु गुरु मेले बहुरि न भवजलि फेरा ।।

(पृ. ७११)

इस **प्रेममई आलौकिक 'वैराग्य'** की अवस्था को कोई विरला गुरमुख ही जानता तथा बूझता है –

प्रेम की सार सोई जाणै जिस नो नदरि तुमारी जीउ ।।

(पृ. १०१६)

ऐसे तीव्र **'वैराग्य'** की अवस्था में जब सतिगुरु की कृपा दृष्टि होती है तो अचानक 'आत्म-प्रकाश' द्वारा प्रभू रूपी कंत से 'मिलाप' होता है। इस 'सुहावनी-घड़ी' (शुभ घड़ी) को गुरबाणी तथा भाई गुरदास जी की वाणी में यूं ब्यान किया गया है –

दरसन देखत ही सुध की न सुध रही
बुधि की न बुधि रही मति मै न मति है ।
सुरति मै न सुरति औ धयान मै न धयान रहयो
गयान मै न गयान रहयो गति मै न गति है ।

(कबित भाई गुरदास जी)

राम गुरि मोहनि मोहि मनु लईआ ।।
हउ आकल बिकल भई गुर देखे हउ लोट पोट होइ पईआ ।।

(पृ. ८३६)

माई री पेखि रही बिसमाद ।।
अनहद धुनी मेरा मनु मोहिओ अचरज ता के स्वाद ।।

(पृ. १२२६)

देखहु अचरजु भइआ ।।
जिह ठाकुर कउ सुनत अगाधि बोधि सो रिदै गुरि दइआ ।।

(पृ. ६१२)

यह केवल **चौथे पद** के '**प्रकाश -मंडल**' की आश्चर्यजनक विस्मादी **'प्रिम -खेल'** है **जो सतगुरु की कृपा दृष्टि द्वारा अन्तरमुखी 'सिमरन' अथवा शब्द -सुरति के अभ्यास द्वारा प्राप्त होती है ।** यहाँ त्रिगुणी माया की सीमा समाप्त हो जाती है तथा बादलों की भांति माया का आस्तित्व आलोप हो जाता है ।

इस उच्च -पावन आत्म मंडल की **'प्रिम -खेल'** को हमारी अल्प -बुद्धि द्वारा पूर्णतय समझा, बूझा या वर्णन नहीं किया जा सकता –

कबीर चरन कमल की मउज को कहि कैसे उनमान ।।
कहिबे कउ सोभा नही देखा ही परवानु ।। (पृ. १३७०)

गूंगै महा अंम्रित रसु चाखिआ पूछे कहनु न जाई हो ।।
(पृ. ६५७)

अचरजु किछु कहणु न जाई ।।
बसतु अगोचर भाई ।। (पृ. ८८३)

बिसमन बिसम भए जउ पेखिओ
कहनु न जाइ वडिआई ।। (पृ. ८२१)

यह **'शब्द -सुरति -लिवलीन'** की अवस्था है जिसे चौथा -पद या **सहज समाधि** भी कहा जाता है । इस **आत्मिक 'प्रिम -रस' में से बाहर निकलना जिज्ञासु के लिए 'मौत' के बराबर है** –

आखा जीवा विसरै मरि जाउ ।। (पृ. ९)

नानक जितु वेला विसरै मेरा सुआमी
तितु वेलै मरि जाइ जीउ मेरा ।। (पृ. ५६२)

हरि बिनु रहि न सकउ **इक राती** ।।
जिउ बिन अमलै अमली मरि जाइ है
जिउ हरि बिनु हम मरि जाती ।। (पृ. ६६८)

इस आत्मिक अवस्था का वर्णन गुरबाणी में यूं किया गया है –

सहज समाधि सदा लिव हरि सिउ जीवां हरि गुन गाई ।।
गुर कै सबदि रता बैरागी निजि घरि ताड़ी लाई ।। (पृ. १२३२)

तेरा जनु राम रसाइणि माता ।।
प्रेम रसा निधि जा कउ उपजी छोडि न कतहू जाता ।।
(पृ. ५३२)

अनदिनु सहज समाधि हरि लागी
हरि जपिआ गहिर गंभीरा ।। (पृ. ५७४)

बाबा मनु मतवारो नाम रसु पीवै सहज रंग रचि रहिआ ।।
अहिनिसि बनी प्रेम लिव लागी सबदु अनाहद गहिआ ।।
(पृ. ३६०)

इस अवस्था में 'गुरमुख जन' का हृदय **उछल उछल** कर स्वयं ही कह उठता है –

खूबु खूबु खूबु खूबु खूबु तेरो नामु ।।
झूठ झूठ झूठ झूठ दुनी गुमानु ।। (पृ. ११३७)

सुनहु लोका मै प्रेम रसु पाइआ ।। (पृ. ३७०)

राम गुरि मोहनि मोहि मनु लइआ ।।
हउ आकल बिकल भई गुर देखे
हउ लोट पोट होइ पईआ ।। (पृ. ८३६)

'आत्मिक -मंडल' की यह अवस्था –

परमार्थ की **'मंज़िल' है ।**
शब्द -सुरति की **लीनता है ।**
आत्मिक साधना की **सफलता है ।**

प्रेम स्वैपना की **उड़ान है ।**
प्रिम रस की **मस्ती** है ।
प्यार की **मीठी महक** है ।
नाम **निधान** है ।
नाम का **महा -रस** है ।
नाम का **चलूला (गदगद) रंग** है ।
नाम की **पारस कला** है ।
इलाही प्रीत डोरी का **खिंचाव** है ।
अनहद धुन की **रुन झुन** है **।**
प्रेम पदार्थ है **।**
प्रेमा भक्ति है ।
भक्ति भंडार है ।
'सिमरन -जीवन' की **संपूर्णता है ।**
कृपा दृष्टि है ।
नदरी नदर **निहाल है ।**
सहज समाधि है ।
अकथ कथा है ।
परम -पद है ।

कबीर गूंगा हूआ बावरा बहरा हूआ कान ।।
पावहु ते पिंगुल भइआ मारिआ मतिगुर बान ।। (पृ. १३७४)

गूंगे महा अंम्रित रसु चाखिआ पूछे कहनु न जाई हो ।।
(पृ. ६५७)

मैं मनि तनि प्रेमु **अगम ठाकुर का**
खिनु खिनु सरधा मनि बहुत उठईआ ।।

गुर देखे सरधा मन पूरी
जिउ चात्रिक प्रिउ प्रिउ बूंद मुखि पईआ ।।१।।
मिलु मिलु सखी हरि कथा सुनईआ ।।
सतिगुरु दइआ करे प्रभु मेले
मै तिसु आगै सिरु कटि कटि पईआ ।।१।। रहाउ ।।
(पृ. ८३६)

मिलि सखीआ पुछहि कहु कंत नीसाणी ।।
रसि प्रेम भरी कछु बोलि न जाणी ।। (पृ. ४५९)

हाँ जी !

रसि प्रेम भरी कछु बोलि न जाणी !

रसि प्रेम भरी कछु बोलि न जाणी !!

रसि प्रेम भरी कछु बोलि न जाणी !!!

J